एक थी वसुंधरा-1

“जिंदगी में याद रखने लायक सिर्फ एक रात ही तो है. जब-जब जी डोलता है, मन विचलित होता है … तब-तब मैं उस रात की याद को कलेज़े से और ज़ोर से लगा लेती हूँ! …”

Story By: Rajveer Midha (rajveermidha)
Posted: Friday, February 7th, 2020
Categories: हिंदी सेक्स स्टोरी
Online version: एक थी वसुंधरा-1

Copyright © Antarvasna part of Indian Porn Empire

एक थी वसुंधरा-1

 यह कहानी सुनें

बहुत दिनों बाद मैं आप का अपना राजवीर एक बार फिर से हाज़िर हुआ हूँ, अपनी क़लम से निकली एक और दास्तान लेकर !
लेकिन पहले अपनी बात !
मेरी पिछली कहानी
एक और अहिल्या
की ऐसी चौतरफ़ा वाहवाही की तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी.

लेकिन अपने सुबुद्ध पाठकों का मुझे इतना प्यार मिला कि एक बार को तो खुद मुझे भी अंदेशों की हद से दूर, यकीन की हद के कुछ पास … अपने एक लेखक ही होने का वहम सा होने लगा था. लेकिन काम-कथाओं के लेखक का होना क्या और न होना क्या !

यद्यपि इस फ़ोरम पर आने वाले सभी लोग पाठक और लेखक … दोनों ज़ाहिरा तौर पर समाज गणमान्य और प्रतिष्ठ लोग हैं, उच्च घरानों की कुलीन बेटियां/बहुएं भी होंगी. कोई कोई सज्जन तो नेता-अभिनेता, अध्यापक/प्रोफ़ेसर या कोई और धर्म-प्रचारक भी होंगे. जो ज़ाहिरा तौर पर समाज को नैतिकता का उपदेश देते होंगे. लेकिन यह बात भी उतनी ही सच है कि हर व्यक्ति में दो अलग अलग व्यक्तित्व छुपे रहते हैं … डॉक्टर जैकाल & मिस्टर हाईड जैसे.

बहुत सारे लोग … जिन में मैं भी शामिल हूँ, अपने-अपने व्यक्तित्व के ग्रे शेड को अभिभूत करने इस साइट पर आते-जाते रहते हैं. अच्छा ही है. यह साइट समाज में प्रैशरकुकर में सेफ्टी-वॉल्व जैसा कार्य अंजाम देती है. किसी और की लिखी काम-कथा को पढ़ कर पाठक

अपने उन गुप्त अहसासों को जी लिया करता है जिनको खुल्लमखुल्ला करने से, सदियों से चले आ रहे संस्कारों में वर्जित करार दिया गया है.
इसमें शर्मिंदा होने अथवा किसी और को शर्मिंदा करने जैसी कोई बात नहीं.

ख़ैर ! ये तो हुई फ़लसफ़े की बातें … वापिस आते हैं अपनी बात पर.

कोई भी सफलता … जिम्मेवारी लाती है और बड़ी सफलता तो … बड़ी जिम्मेवारी लाती है. इस बात का एहसास मुझे तब हुआ जब पाठकों के अगले पार्ट की मांग के निरंतर मेल पर मेल आने लगे. लेकिन इधर ये हाल रहा कि एकाध नहीं … चार-चार बार 20-20, 22-22 पन्नों की अगली कड़ी की अलग-अलग कहानियां लिख कर फाड़ डाली.

खुद को ही बात कुछ जम सी नहीं रही थी. पाठकों से मिले अतुलनीय प्यार और बेमिसाल सराहना के चलते 'अहिल्या' सच में मेरी एक ऐसी कालजयी रचना बन गई जिस से पार पाने में मुझ रचियता को भी नाकों चने चबाने पड़े.

अपनी पांचवी कोशिश में कुछ पाठको को पेश करने लायक दाल-दलिया किया है. सो !
आप की ख़िदमत में पेश है.
अपनी राय सांझा जरूर कीजियेगा.

अपने नये पाठकों से मेरा विनम्र निवेदन है कि मेरी नई कहानी से ठीक से तारतम्य बिठाने के लिए पहले मेरी पुरानी कहानियों को एक बार पढ़ लें. वैसे तो हर कहानी अपने-आप में सम्पूर्ण हैं, फिर भी पुरानी कहानियों पहले पढ़ लेने से पाठक नयी कहानी को … कहानी के पात्रों को क़दरतन बेहतर तरीक़े से आत्मसात कर पायेंगे. यूं नहीं भी पढ़ेंगे तो भी कहानी के लुत्फ़ में कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा.

!!अस्तु !!

इति श्री दिल की भड़ास पुराण !
*****

और फिर ठीक 424 दिनों बाद एक दिन”
“हैलो ! मैं बोल रही हूँ … वसुंधरा !”

मेरी डायरेक्ट लैंडलाइन पर एक चिरपरिचित आवाज़ सुनकर जनवरी की सर्दियों की उस सीली सी … अलसाई सी शाम में एक बारगी तो मुझे पसीना ही आ गया.
शाम के सात बजे थे, सारा स्टाफ़ छुट्टी कर के जा चुका था और मैं टैक्स की कैलकुलेशन से माथापच्ची कर-कर के ज़ेहनी तौर पर बुरी तरह से पस्त … बस ऑफिस से निकलने की तैयारी ही कर रहा था.

वेस्टर्न डिस्टर्बेंस के कारण पिछले दो दिन से बारिश की झड़ी लगी हुई थी और अभी तीन और दिन राहत मिलने की कोई उम्मीद नहीं थी. सारा उत्तर भारत भयंकर शीतलहर की चपेट में था.
“अरे वसुंधरा जी आप ! … कैसी हैं ?”
“मैं ठीक हूँ. आपसे मिलना चाहती हूँ.”
“वसुंधरा जी ! ये क्या बात हुई ? क्या वचन दिया था आपने ?”
“वो ठीक है लेकिन एक बार … आखिरी बार आप से मिलना चाहती हूँ. मेरी शादी तय हो गयी है, 02 फ़रवरी की. राज ! मैंने आप का हुक्म मान लिया, अब आप मेरी यह इल्तज़ा पूरी कर दें … आख़िरी इल्तज़ा प्लीज़ ! ” कहते-कहते वसुंधरा की आवाज़ भर्रा गयी थी.

मैंने सामने पड़े टेबल-कैलेंडर पर नज़र मारी.
02 फ़रवरी, सोमवार … वसुंधरा की शादी !

आज 27 जनवरी, मंगलवार की शाम तो हुई भी पड़ी है. मुझे भी अंदर ही अंदर एक धक्का

सा लगा … नहीं लगना चाहिए था लेकिन लगा.
“आप यह आखिरी इल्तज़ा जैसे अल्फ़ाज़ क्यों बोल रही हैं … वसुंधरा ! किसी और ने देखा हो … न देखा हो पर आप ने तो मेरा अंतर देखा है. देखा है न ?” किसी अनहोनी की आशंका से मेरे तन में सिहरन की लहर सी दौड़ गयी.
“जी ! इसी लिए तो हिम्मत हुई आपको फोन करने की.”

“ठीक है ! कहाँ है आप ?”
“आज नहीं ! अभी तो मैं दिल्ली में हूँ. बच्चों को लेकर गणतंत्र दिवस की परेड में पार्टिसिपेट करने आयी थी. बाकी सब तो परसों सवेरे 10-11 बजे के आस-पास दिल्ली से स्कूल की बस से वापिस डगशई के लिए निकलेंगे. लेकिन मैं अकेली कल सुबह सवेरे शताब्दी पकड़ कर साढ़े ग्यारह-बारह बजे तक चंडीगढ़ पहुँच जाऊंगी. और चंडीगढ़ स्टेशन से टैक्सी लेकर एक डेढ़ बजे तक डगशई स्कूल में. रिजाइन तो पहले ही कर चुकी हूँ, थोड़ी सी फार्मेलिटी बाकी है. कुल एक घंटा लगेगा, मैक्सीमम 3 बजे तक वापिस कॉटेज में. अगर आप शाम 5 बजे तक भी आ सकें तो … सीधे कॉटेज ही आइयेगा.”

पढ़े-लिखे और ज़हीन होने के अपने फायदे हैं. आदमी अपनी सोचों को … अपने इरादों को अच्छे से प्लान कर लेता है.
“ठीक है ! आता हूँ … और सुनाइये ! कैसी कट रही है ?”
“कल मिल कर बताती हूँ.”

“एक मिनट वसुंधरा ! सिर्फ इतना बता दीजिये कि आप खुश तो हैं ना ?”
“राज ! अब फर्क नहीं पड़ता. गुज़री जिंदगी में याद रखने लायक सिर्फ एक रात ही तो है. जब-जब जी डोलता है, मन विचलित होता है … तब-तब मैं उस रात की याद को कलेज़े से और ज़ोर से लगा लेती हूँ और सच जानिये ! मेरे सारे दु:ख-दर्द, अवसाद क्षणभर में गायब हो जाते हैं.”

“वसुंधरा ! ऐसा न बोल. दोबारा जीना शुरू कर … मेरी गुड़िया ! तूने वादा किया था मुझ से.” जाने क्यों हर बार मैं वसुंधरा के अप्रतिम प्रेम के आगे हार जाता हूँ.
“कोशिश तो बहुत की राज ! लेकिन … नहीं होता.” कहते-कहते वसुंधरा फ़ोन पर ही फ़फ़क पड़ी.

“वसुंधरा प्लीज़ … मत रो मेरी जान … वसु प्लीज़ ! तुझे मेरी कसम !” मैं किमकर्तव्यविमूढ़ था. समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ !
“ख़ैर छोड़िये मेरी बात को … तो आप आ रहें हैं न ?” थोड़ा संयत होते हुए वसुन्धरा ने मुझे पूछा.
“आपका दिल क्या कहता है ?” मैंने वातावरण थोड़ा हल्का करने की गरज़ से पूछा.
“दिल की कहाँ सुनती है दुनिया ?” वसुंधरा का ठंडा उच्छ्श्वास मेरे अंदर तक उतर गया. मैं बिल्कुल निशब्द हो गया.
“चलिये राज ! तो फिर … कल मिलते हैं !”
“हाँ ! बिल्कुल मिलते हैं … अपना ख्याल रखना.”

फ़ोन डिस्कनेक्ट हो गया और मैं बेसाख़्ता अतीत में उतर गया.

आज 14 महीनों बाद मैंने वसुंधरा की आवाज़ सुनी थी लेकिन ऐसे लगता था जैसे कल ही की तो बात हो. वसुंधरा की आवाज़ में वही ख़नक, वही ख़लिश और बिल्कुल वही सामने वाले पर छा जाने वाली लय, सब कुछ वैसा ही था … कुछ भी तो नहीं बदला था.

वसुंधरा की शादी ! सोच कर ही कुछ बहुत ही बेशकीमती सा खोने के अहसाह की सी फ़ीलिंग होने लगी लेकिन दुनियावी लिहाज़ से यही ठीक था, यही होना चाहिए था बल्कि कई साल पहले हो चुका होना चाहिए था.
हादसों को भुला कर आगे बढ़ने का नाम ही जिंदगी है और समय आ गया था कि वसुंधरा भी अपनी जिंदगी के एक अहम् हादसे को भुला कर आगे बढ़े.

लेकिन फ़ोन पर वसुंधरा खुश क्यों नहीं सुनाई पड़ रही थी ?
तो उसका जवाब तो यही हो सकता है कि इश्क़ की दुनिया का हिसाब उल्टा है. बकौल चचा ग़ालिब
'उसी को देख कर जीते हैं,
जिस काफ़िर पे दम निकले !'

लेकिन इधर मेरी अपनी मज़बूरियां थी. जो वसुंधरा का अवचेतन मन चाहता था वो मुमकिन नहीं था.
यूं आज के जमाने में वसुंधरा जैसी प्रेयसी का मिलना तो बहुत ही नसीब की बात थी मगर मैं पहले से ही शादीशुदा, बाल-बच्चेदार इंसान था. वसुंधरा वाले इस सारे घोटाले में मेरी पत्नी और मेरे बच्चों का रत्तीभर भी कोई कसूर नहीं था और मैं खुद कोई इख़्लाक़ से गिरा हुआ शख़्स नहीं था जो ऐसा चाहता हो.

तो … हालात का यही तकाज़ा था कि मैं और वसुंधरा दिल की बातें अपने-अपने दिलों में ही रख कर एक-दूसरे से दूर-दूर ही रहें. लेकिन आज वसुंधरा के फ़ोन के पत्थर ने शांत पानी में फिर से भंवर उठा दिए थे.

14 महीने पहले के नवंबर की वो तिलिस्मी शाम के जादू से मैं बहुत देर बाद और बहुत ही मुश्किल से उबर पाया था. वसुंधरा के जिस्म की खुशबू मेरे खुद के जिस्म के रेशे-रेशे में समा गयी थी. वसुंधरा की वो बेलौस मुहब्बत, वो बेमिसाल समर्पण की भावना, वो त्याग, वो इंतज़ार और खुद वसुंधरा … सब कुछ किसी दूसरे जहान का लगता था … लगता था क्या, आज भी लगता है.
कभी-कभी वसुंधरा के बारे में सोचते हुए मुझे ऐसा लगता था कि वसुंधरा जरूर कोई शापित अप्सरा थी जिसे किसी क्षुद्र मानव को प्यार करने के जुर्म में स्वर्ग से निकाल कर पृथ्वी पर भेज दिया गया हो और साथ में ये शाप दे दिया गया हो कि 'जा ! तुझे पृथ्वी पर

भी तेरा प्यार नसीब ना हो !'

कल शाम मैं फिर से उस परी-चेहरा, उस शापित-अप्सरा को रु-ब-रु होऊंगा … सोच कर ही मेरे रौंगटे खड़े होने लगे.
कैसी दिखती होगी वसुंधरा ?
कैसे सामना कर पाउँगा उन आँखों में इंतज़ार लिए उस शोला-बदन का ?
क्या कहूंगा अपनी उस प्रेम-दीवानी से ?

दोबारा उस दिदीप्तिमान दीपशिखा की तपस्या के तेज़ के सामने समर्पण कर दूंगा या उस का सम्मान करते हुये एक अग्निपरीक्षा और दूंगा ?

यह सब तो अभी भविष्य की बात थी लेकिन एक बात तो पक्की थी कि गालिबन बतौर प्रेयसी … वसुंधरा से कल मेरी आखिरी भेंट होने को थी और कल का दिन, कल की तारीख़ मेरी बाकी की जिंदगी में भुलाये नहीं भूलने वाला साबित होने वाला था. सोच कर मेरी रीढ़ की हड्डी में सिहरन की एक लहर सी दौड़ गयी. तत्काल मेरे जिस्म के तमाम रोमों ने ढेरों पसीना उगल दिया.

एक-दो दिन के लिए बिज़नेस-टूर के बहाने घर से निकलने में कोई परेशानी नहीं थी. वैसे भी बद्दी के एक बड़े इंजीनियरिंग कॉलेज के सारे कंप्यूटर्स की एनुअल मेंटेनेंस कॉन्ट्रेक्ट मेरी फर्म के पास ही था और रिन्यूड कॉन्ट्रेक्ट साइन करने के लिए पहले ही से वहाँ का मेरा एनुअल विजिट ड्यू था.
तो कम से कम इस फ्रंट पर तो कोई परेशानी नहीं थी.

बद्दी में किसी भी सूरत मुझे एक-डेढ़ घंटे से ज्यादा नहीं लगने थे और बद्दी से डगशई लगभग साठ-बासठ किलोमीटर दूर था. ज्यादा से ज्यादा डेढ़-दो घंटे की ड्राइव थी. बद्दी से कालका, कालका से धरमपुर और डगशई. सबेरे अगर मैं दस बजे भी घर से निकलूं तो सारा

काम निपटाता हुआ मैं आराम से चार बजे तक डगशई पहुँच सकता था.

और उस के बाद अगले दिन सुबह होने तक सिर्फ मैं और वसुंधरा … सोच कर ही मेरे पूरे बदन में झुरझुरी की लहर दौड़ गयी.

इस सब के बीच एक उलझन अभी भी मेरे दिमाग को मथे जा रही थी कि आखिर वसुंधरा मुझ से मिलना क्यों चाहती है ? क्या है उस के मन में ?
क्यों वसुंधरा 'आख़िरी इल्तज़ा' जैसे शब्द इस्तेमाल कर रही थी ?

इन सभी 'क्यों' का ज़वाब भविष्य के गर्भ में था और इन सब सवालों का ज़वाब पाने के लिए सिवाए इंतज़ार के कोई और चारा नहीं था. गहरी सोच में डूबे हुए मैंने वॉचमैन को बुला कर ऑफिस बंद करने का निर्देश दिया और घर की ओर रवाना हो गया.

यूं कॉन्ट्रेक्ट साइन तो एक बजे से भी पहले ही हो गया लेकिन इंस्टिटचूट के डाइरेक्टर से फ़िज़ूल सी डिस्कशन में दो बज गये. इंस्टिटचूट के डाइरेक्टर की लंच साथ करने की हाय-तौबा को दर-किनार कर के बद्दी से निकलते-निकलते मुझे सवा दो बज़ गए.

पिछले दो-तीन दिनों से हो रही मुसल्सल बारिश के कारण वातावरण में धुंध तो नहीं थी लेकिन हवा औसत से बहुत ज्यादा ठंडी चल रही थी और सुबह से ही आसमान में इक्के-दुक्के बादलों के काफ़िले मटरग़श्ती कर रहे थे.

लेकिन जैसे जैसे दिन ढल रहा था, वैसे वैसे आसमान में बादलों की संख्या में लगातार इज़ाफ़ा होता जा रहा था. पहाड़ों से आ रही ठंडी हवा के झोंके मौसम के और ज्यादा ठंडा होने की धमकी बराबर दे रहे थे. लंच-टाइम तो था लेकिन अब मुझे लंच करने की कोई सुध नहीं थी. अब तो मेरे होशोहवास पर सिर्फ और सिर्फ़ वसुंधरा ही छाई हुई थी. मैं अपनी कार पर … घोड़े पर सवार पृथ्वी राज चौहान के मानिंद अपनी संजोगिता (वसुंधरा) के

निमंत्रण पर दिल्ली (डगशई) की ओर वायु-वेग से उड़ा जा रहा था.

क़रीब पौने चार बजे थे जब मैंने धरमपुर को टच किया. अब डगशई सात-आठ किलोमीटर ही दूर था. मैंने धरमपुर के मशहूर रेस्तराँ 'हवेली' पर रुक कर एक कप कॉफ़ी पी और दो जनों के लिए कुछ इवनिंग स्नैक्स और फिर किसी अंतर-प्रेरणा से प्रेरित हो कर मैंने दो जनों के लिए ख़ाना पैक करवा लिया.

जब सवा चार बजे के करीब जब मैंने डगशई की ओर कार मोड़ी तब तक मौसम में आश्चर्यजनक रूप से तब्दीली आ चुकी थी. आसमान पर पूर्ण रूप से बादलों की सत्ता क़ायम हो चुकी थी और सूर्य भगवान् कब के बादलों की मोटी तय में जा छुपे थे. ठंडी फेंट हवा चल रही थी. दूर बर्फ से लदे पहाड़ों के नज़दीक रह-रह कर कौंधती बिजली अपने आइंदा इरादों का खुल कर ऐलान कर रही थी. सड़क पर सभी वाहनों में हेडलाइट जला कर अपने-अपने गंतव्य पर जल्दी से जल्दी पहुँचने की एक होड़ सी लगी हुई थी.

मौसम के इरादे अच्छे तो क़तई नहीं थे, जिसका सबूत मुझे जल्दी ही मिल गया. क़रीब चार बज कर चालीस मिनट पर सांझ के धंधुलके में जैसे ही मैंने वसुंधरा के कॉटेज़ के बाहर अपनी कार खड़ी कर के पिछली सीट पर से अपना स्ट्रोलर निकाला, बारिश की पहली बूँद मेरे सर पर गिरी.
मैं कॉटेज़ की चारदीवारी के अंदर लॉन के साइड से बनी राहदारी की लाल बज़री पर से लगभग भागता हुआ कॉटेज़ के दरवाज़े पर पहुंचा. शुक्र है ... दरवाज़ा सिर्फ उढ़का हुआ था, उस में ताला नहीं लगा हुआ था और अंदर लाइट जल रही थी. इस का मतलब वसुंधरा घर पर ही थी.

पसलियों में धाड़-धाड़ बजते दिल के साथ, तेज़ हवा और हल्की फुहार में मैंने बिना नॉक किये दरवाज़े को हलके से धकेल कर खोला और फ़ौरन अंदर दाखिल होकर दरवाज़े की चिटखनी चढ़ा कर, दरवाज़े से अपनी पीठ सटा कर, पलट कर सामने देखा. बिल्कुल सामने

ईज़ी-चेयर पर वसुंधरा घुटने मोड़ कर, पैर कुर्सी के ऊपर रख कर थोड़ी सी बायीं करवट लिए आँखें बंद किये बैठी हुई थी जैसे किसी की राह देखते-देखते आंखें थक कर झपक सी गयीं हों.

ज़ुल्फ़ों की एक-दो आवारा लटें दायीं गाल पर अठखेलियां कर रही थी. वही साफ़-सुथरा बेदाग़ चेहरा, रौशन पेशानी, कमान सी भवें और बिना किसी लिपस्टिक के गुलाबी सुडौल होंठ. काली साड़ी के ऊपर गाढ़े महरून रंग का गर्म शॉल ओढ़े वसुंधरा सच में किसी और ही दुनिया की लग रही थी.
वसुंधरा की आंतरिक खूबसूरती से इतर वसुंधरा की भौतिक रूपराशि भी गुज़रते वक़्त के साथ-साथ इतनी तिलिस्मी, इतनी आकर्षक हो गयी थी कि बुत बना मैं जाने ऐसे ही एक मिनट या दस मिनट या शायद इस से भी ज्यादा, वसुंधरा को अपलक निहारता रहा.

कहानी जारी रहेगी.
rajveermidha@yahoo.com

Other stories you may be interested in

मेरी बहन और जीजू की अदला-बदली की फैंटेसी-7

यह कहानी पूरी तरह से काल्पनिक सोच पर आधारित है, जिसे आप अन्तर्वासना वेबसाइट पर पढ़ रहे हैं. नमस्कार दोस्तो, मेरा नाम राज है और मेरी उम्र 24 साल है. आप सभी ने इस कहानी के पिछले अंक में दो […]
Full Story >>>

नैनीताल में दो जवान लड़कियां एक साथ चोदी-2

नैनीताल में दो जवान लड़कियां एक साथ चोदी-1 में आपने पढ़ा कि मेरा भाई अपने तीन दोस्तों के साथ नैनीताल घूमने गया. वहां उसकी दोस्ती दो लड़कियों से हो गयी. मेरा भी अभी एक लड़की के साथ होटल के रूम […]
Full Story >>>

नैनीताल में दो जवान लड़कियां एक साथ चोदी-1

लेखिका की पिछली कहानी : सीधी सादी लड़की की पहली चुदाई दोस्तो, मैं फेहमीना इकबाल आप सबके सामने एक नई हिंदी चुदाई की कहानी लेकर उपस्थित हूँ। ये सेक्स स्टोरी मेरे भाई साहिल की हैं। वह चाहता है कि मैं यह […]
Full Story >>>

पड़ोसन जवान लड़की की मस्त चुत चुदाई

दोस्तो, उम्मीद है कि आप सब अच्छे होंगे. मैं अभि एक बार फिर आपकी सेवा में हाजिर हूँ. मैं देहरादून से हूँ और आपके सामने एक मस्त सेक्स कहानी लेकर आया हूँ. ये सेक्स कहानी मेरे और मेरी पड़ोसन लड़की […]
Full Story >>>

इश्क विश्क प्यार व्यार और लम्बा इन्तजार-5

दोस्तो, मैं आपका रवि खन्ना फिर से अपनी और मेरी गर्लफ्रेंड मोनिका की स्टोरी के 5वें भाग के साथ हाजिर हूँ. जो पाठक मेरे और मोनिका के बारे में नहीं जानते हैं, वो मेरी गर्लफ्रेंड के साथ सेक्स स्टोरी का […]
Full Story >>>